फूल नहीं खिला

(सी. पद्मनाभन)

"हाय ! मेरे दोस्त !" आंखों में आंसु भरकर उसने कहा: "एक आदमी, जिसके जीवन का लक्ष्य टूट गया है, कैसे जीवित रह सकता ? एक आदमी, जिसका आशा-पूर्ण हृदय शून्य हो गया है, कैसे जीवित रह सकता ? आशा है, जो जीवन को आगे बढ़ाती है !"

निश्शब्द, निर्निमेष होकर मैं वे अश्रुपूर्ण आँखों से देखता रहा। एक साम्राट की, जिनके विशाल और विभवसमृद्ध साम्राज्य खो गया है, आँखों में जो दीन भाव लहराता है, वही विकार उसकी आँखों में मैंने देखा।

शशीन्द्र ऐसा नहीं था। उसके जीतत में कुछ व्यक्त विचार थे, कुछ आदर्श थे, जो कभी नहीं बुझते। उसकी आँखों में आनन्द का एक महा-काव्य था, जोश देनेवाला एक समर-गान था। उसके गालों पर एक सुन्दर शोणिमा थी, उसके अरुणाधर में चमेली के फूल विकसित थे।

"हाय, मेरे शशि, आप ऐसे क्यों ?" उस श्मशाननिश्शब्दता की भयानकता में मैंने क्षीण स्वर में पूछा।

"आप यह क्यों नहीं पूछते कि मैं क्यों नहीं मरता ? हाँ, मैं क्यों नहीं मरता ? मुझे इसके लिए, स्वयं मरने के लिए साहस नहीं हैं। मरने का साहस, मरने का साहस ! ह, ह, ह !"

कुछ समय के बाद उसने फिर पूछा: "दोस्त, एक काम, क्या आप मुझे एक सहायता कर सकेत हैं ?"

"क्या, शशि, क्या चाहिए ? मुझसे क्या मदद ?"

वह अन्तरीक्ष के नीलिमा की ओर अपने अलस दृष्टि गड़ाकर बेबसी की मूर्ति सी खड़ा रहा।

"नहीं। आप नहीं करेंगे।......................" मैंने आश्चर्य से स्तब्ध होकर पूछा:— "क्यों शशि, मुझपर विश्वास नहीं है ?"

"नहीं, मेरा किसी पर विश्वास नहीं है। विश्वास रखने केलिए एक हृदय चाहिए। मेरा हृदय नहीं है। हृदय खो गया।" अव्यक्त स्वर में वह कुछ कहता रहता था।

"मेरे शशि, क्या चाहिए, क्या चाहते हो?" "कहूँगा। पर आप मदद नहीं करेंगे। मुझे चाहिए, विष............! विष............ह............ह............ह............ह!"

उसका स्वर क्रूर से क्रूर होने लगा। उसके "हाहाकार" से अन्तरीक्ष मुखरित होता रहा। मुझे भयचकित करके वह क्रूरस्वर लहरें मारता रहा।

वह एक पागल के जैसे भयंकर होने लगा। सम्भ्रम से दृष्टिविक्षेप करके उसने अपनी ऊँगलियाँ से बाल पकड़कर खींचने लगा। आँखों में पानी भरकर कहने लगाः "अपना सार-सर्वस्व....................सभी प्रिय वस्तु....................टूट गया....................खो गया.................... हाय! मैं इन आँखों से सन भयानक दृश्य देखने रहा। मेरे प्रिय, पूज्य पिताजी बुखार से "हा............हा" कहकर, रोकर, आँखों में आँसु भरकर....................मर गये। उनकी आँखें खुली रहीं! उनकी आँखों में, स्वप्नशकल, जो सफलीकृत नहीं था, घिरा रहा। मुझे और पाँच वर्ष की बालिका, श्यामला को देखकर पूज्यपिताजी....................प्रिपपिताजी....................हाय दोस्त....................हमें छोड़कर गये। मेरी आशा थी कि मेरी माँ हमें छोड़कर नहीं जायेंगी। पर....................आशा कभी सफल नहीं होती....................माँ, जो अपने पति के पीछे जाने के लिए तयार थी, मेरी स्नेहमयी माँ भी हमें छोड़ गयी। मैं जलदी कहानी खतम करूँगा। आ, मैं क्यों यह सन कहता है! मेरे हृदय के शुष्क मेखला विकार के धूप से भरा है; वहाँ आग जलने के पहले मैं कहानी कहना चाहता हूँ।

"पाँच वर्ष को श्यामा को, मेरी प्रिय बहिन को मेरे परिक्षीण हाथों में छोड़कर, धीरे धीरे, विषादमूक स्वर में कहाः "शशि....................श्यामा...................." फिर क्या, जब मैं मूर्छा से होश में आया, तब देखा कि कोई बुढ़िया मेरी बहन को उसकी माता की छाती पर से उठा ले जाती।

"दोस्त, मेरी करुणामयी कहानी शुरू होती है। पिताजी और माताजी मेरे हाथ से पानी पीकर मर गये। पर, श्यामा, वह भी....................

वह अनियंत्रित हो गया था। उसकी वेदना पूर्ण कहानी सब उस 'पर' में छिपी।

"इस तरह मैं उस प्यारी बाहिन के लिए, पाँच वर्ष की लडकी के लिए जीवित रहा। तब उसके मृदु शरीर में धूल देखता तब मैं उसको स्नान कराता। भूखी प्यासी होकर रोने के पहले ही मैं उसको दूध पिलाता। उसको मैं राजा की और याक्षि की अत्भुत कहानियाँ सुनाता। उसके लिये गाता रहा; अंक में लेकर सुलाता रहा। हाथों में उठा ले चलता रहा। मैं क्यों ये सब, बाहिन को शुश्रूषा करने का विवरण आपको सुनाऊँ?"

"मैं नहीं सुनाऊँगा। वेदना की कहानी कोई भी नहीं चाहता।" फिर वह चुप हो रहा।

आंखों में आंसु भरकर मैं उस भाई को देखते रहा— "शशि फिर......................"

"फिर......................फिर क्या है......................हाँ, मैंने क्या कहा था? उसका पिता, माता और सखी सब मैं था।

"अरी, श्यामा, इस तरह मछली पकड़ते समय मछुए को......................" एक दिन मैंने उसको वह भूत की कहानी सुना दी।

"क्या मिला? एक बड़ी मछली? एक हाथी-की बड़ी?" अपने हाथों को विकसित करके उसने तुतलाकर मधुर स्वर में पूछा।

"सुनो, श्यामा, वह मछली नहीं थी, पर एक पात्र, जो जब खोल दिया, तब एक भयंकर, भयानक, दुष्ट, क्रूर भूत!......................वक्र दंष्ट्र और वृत्तनेत्र......................"

हाय! भयचकित होकर उसने मुझे आलिंगन किया। मैंने उसको अंक में बिठाकर उसके नीलनेत्रों में और अरुणाधरों में चूमचूमकर कहा: "फिर मछुआ अपने तंत्र से भूत को पात्र में बंधकर आगाधसमुद्र में ही......................" पूरा करने के पहले ही वह आह्लाद में ढोलन करने लगी। "वही चाहिए, वही चाहिए, हि, हि, हि, हि......................वह तुतलाकर ही कहने लगी। वह निष्कलंक बालिका दुष्ट भूत पर इतना अमर्ष रखती थी कि मेरे अधरों में भी मुस्कुराहट आये।

उससे मैंने कभी बुरी बात नहीं कही। मुझे उसपर कभी नाराज़ नहीं आया। वह कई बार मुझसे नाराज़ होकर अलग रही। एक दिन जब मुझे कुछ अधिक काम करना था तब उसने मेरी गोदी में लेटकर सोने के लिए हठ किया। मैंने उसकी ओर न देखने का स्वांग किया। वह एक कोने में धूल में गिर पड़ी। कई बार बुलाने पर भी नहीं आयी। "अरी, श्याम........" मैंने उसको अंक में बिठाया। उसके नील नेत्रों में सुंदर मोती चमक रहे थे। उसकी मुस्कुराहट में मेरा सारा अस्वास्थ्य द्रवीभूत हो गया।

एक दिन मैं उसके साथ मिट्टी की रोटी बनाने के लिए नहीं गया। इसपर वह रूठ गयी। कहानी न सुनाने के कारण भी वह कई बार नाराज़ हुई। सायंकाल में, जब मैं काम करके आता था, तब मिठाई छिपाने के कारण और इस तरह अनेक बातों के लिए वह मुझ से चिढ़ती थी। पर जब मैंने "अरी, श्यामा......................" पुकारता तब वह आह्लादपूर्वक दौड़ आयी थी।

हमारी नाराज़गी और खुशी!
हमारी खुशी और नाराज़गी!

उसके साथ उसका मधुर स्मरण भी मिट जाता तो.....................

उसके बारे में सबसे अधिक वेदनापूर्ण स्मरण। जो है वह यही है: पहली बार............ वह एक शनिवार था......................मैं उससे क्रुद्ध हुआ था। मैं अपने अविवेक में आप डालना चाहता हूँ। उस दिन वह, खेल कर आयी थी। उसका 'सिल्क जेकट' फट गया था। मेरे तुच्छ वेतन के एक अमूल्य भाग से वह जेकट मैंने खरीदी थी। वह सुन्दर मृदु जेकट! मैंने उसपर अप्रसन्न हुआ।

"मैं आगे तेरेलिये एक भी जेकट नहीं लाऊँगा।"

"नहीं लायेंगे !................?" दीनस्वर में उसने पूछा।

"नहीं।" मैंने क्रूर स्वर में उत्तर दिया।

"मुझे नहीं चाहिए।" वह वेदना से, पर दृढ़ स्वर में कहकर, जेकट ज़मीन पर डालकर धूल, में गिर पड़ी। मगर, यह भाई, दुष्ट सहोदर, उसे सांत्वना न देकर अपने काम के लिये गया।

"मैं कहानी समाप्त करता हूँ, पागल होने के पहले.....................।"

उसने अपने जेब से एक फटा हुआ जेकट बाहर उठाकर चूमा और कहा: "दोस्त, मैं शाम को आते समय मेरी बहिन के लिए एक नया सिल्क जेकट लाया। अच्छा एक। हाय, श्यामा को बहुत खुशी होगी। "भैया, भैया....................." तुतलाकर वह दौड आयेगी; आलिंगन करेगी; मैं उसके आंखों से मोती के दाने अधर से पोंछ लूँगा।

"पर.....................शाम को, आलिंगन करने के लिए, चूमने के लिए 'भय्या, भय्या' कहकर तुतलाकर वह नहीं दौड आयी। फटा हुआ जेकट के समीप में मेरी श्यामा, मेरी ही श्यामा.....................दोस्त, मुझे दुष्ट पुकारो, मुझे मार डालो, विष दो.....................मेरा सबसे वेदनाजनक स्मरण यही है, मेरी श्यामा को नया जेकट पहनाकर श्मशान के एकांत में डालने के लिए लाते हैं।.....................

उसने वह जेकट आंखों में, गण्डों में, अधरों में और छाती में रख कर आँखों में आंसु बहाये। "दोस्त, मैं यह अपने हाथ में रखता हूँ। यह जेकट। अंत में उसने अपने क्रूर भैया को कुछ पानी के लिये पुकारा होगा।

यह जेकट मैं चलते समय, बैठते समय, सोते समय हमेशा अपने पास रखता हूँ। मैं इसे चूमता हूँ; इससे मुस्कुराता हूँ; अंक में रखकर गाता हूँ; छाती में लेकर रोता हूँ। इसको यक्षि की कहानी सुनाता हूँ। इस जेकट में मैं अपनी सबसे प्यारी बहिन को देखता हूँ।"

मुलाकात !!

एन० श्रीधर शेणाई बीकोम III

"अरे, रमेश, तुम !" मैंने आश्चर्य से पूछा ।

सवेरे के आठ बजे थे। हाथ में एक छोटी-सी थैली लेकर रमेश को अपने कमरे में घुसते देखकर मुझे बडा आश्चर्य हुआ समाचार पत्र एक तरफ मेज़ पर रखकर मैं ने उसका स्वागत किया और बैठने को कुर्सी भी दी। नौकर को बुलाकर दो गिलास चाय लाने की आज्ञा दी और रमेश से पूछा ।

"क्यों, आज रास्ता भूलकर इस ओर आये क्या ?" मैं ने रमेश से पूछा ।

"नहीं, आज मुझे यहाँ एक इन्टरव्यू के लिए जाना है ।" रमेशने कहा ।

"अरे तुम्हारी सूरत बिलकुल बदल गयी है, क्या बात है ?" मैं ने फिर पूछा

"कुछ नहीं" रमेश बोला ।

"क्या, तबियत ठीक नहीं ?" मैं ने पूछा ।

लेकिन रमेश मौन हो रहा। कुछ देर बाद उसने नहाने की इच्छा प्रकट की। मैंने उसे गुसलखाना दिखा दिया जब वह नहाने गया तो तरह तरह के विचार मेरे मन में उठे। रमेश की सूरत देखकर मुझे सचमुच अचंभा हुआ। कालेज के वे दिन मुझे याद आये जब रमेश की सूरत देखकर और लडके जलते थे ।

छुटपन से ही रमेश मेरा दोस्त था। हाईस्कूल की परीक्षा पास करके हम दोनों नागपुर नाशनल कालेज में भरती हुए। हम वहाँ कालेज होस्टल में एक ही कमरे में रहते थे। रमेश मुझसे एक फूट लम्बा था और हट्टा-कट्टा जवान था। देखने में भी बडा सुन्दर। सभी खेलों में वह होशियार था। छः वर्ष तक हम दोनों उस कालेज में एक साथ पढते रहे। आखिरी चार वर्ष रमेश ही उस कालेज का चाम्पियन था। कालेज के फुटबाल और क्रिकेट टीमों का भी वह कप्तान बनाया गया। पढने में भी रमेश तेज़ था। सभी परीक्षाओं में उसे अच्छे अंक मिलते थे। इस तरह रमेश कालेज का एक "पेरसनालिटी" ही था ।

ये सब बातें मुझे याद आयी। जब हम दोनों में एम-ए पास किया, तो मुझे अपने पिताजी के प्रयत्न के द्वारा, जो एक बडे सरकारी अफसर थे दिल्ली में हिन्दु कालेज में प्रोफसर का काम मिला। अच्छी तनख्वाह मिलती थी। अभी मेरी शादी नहीं हुई थी। इसलिए जो आमदनी मिलती मेज़ से गुज़र करने के लिए काफी थी। मैं दिल्ली में कालेज के पास ही एक मकान में रहता था ।

जब रमेश नहाकर आया तो हम दोनों ने पास के एक होटल में जाकर नाश्ता किया और फिर अपने मकान को हम वापस लौटे। मैंने रमेश से पिछले तीन वर्ष की बातें पूछी। रमेश ने कहा कि जब उसने एम-ए पास किया तो उसकी आशा थी कि वह कहीं कोई बडा नौकरी पा जायगा। इसलिए कोई बडी बडी नौकरियों की खोज में लगा। लेकिन उसे यह मालूम करने में देर नहीं लगी कि सिफारिश के बिना कुछ नहीं चलता। कहीं काम मिलने का या तो अच्छी सिफारिश की ज़रूरत थी या इन्टरव्यू करने वाले लोगों की मुट्ठी गरम करनी थी। रमेश के पिता नागपूर से तीस मील दूर एक छोटे से सरकारी आफिस में क्लार्क थे और बडे बडे लोगों से उनकी जान पहचान नहीं थी। इसलिए कहीं बडे बडे लोगों से सिफारिशी पत्र मिलना नामुमकिन था। उनकी आमदनी भी कम थी, इसलिए वे कुछ कमाकर नहीं रख सके। इस से बडे बडे अफसरों की मुट्ठी गरम करना उनकी शक्ति के बाहर की बात थी। इन सब का नतीजा यह हुआ कि उसके एम-ए पास किये तीन वर्ष हुए फिर भी रमेश को कहीं काम नहीं मिला। महीने में दो या तीन बार वह इन्टरव्यू केलिए जहाँ-वहाँ जाता लेकिन कहीं सफलता नहीं मिलती। काम मिलता भी कैसे, जब कि उसके पास सिफारिशी पत्र या पैसे नहीं थे। ये सारी बातें रमेश ने बडे दुख के साथ मुझसे कही।

"नरेश, तुम ही कहो, अब मैं क्या करूँ? तीन वर्ष से इस तरह फिर रहा हूँ। मेरी दो बडी बहिनें हैं और दो छोटी। एक की भी शादी नहीं हुई है। पिताजी की आमदनी भी बहुत कम। कर्ज़ बढता जा रहा है। पिताजी अब मुझे कभी कभी झिडकियाँ देने लगते हैं। कहते है, कि मैं इतना बडा हुआ और एक कौडी भी कमाकर नहीं लाता। जाना ही अब मेरे लिए मुश्किल हो गया है।" रमेश के हर एक शब्द से शोक जैसे टपक पडता था। मैं ने उसे सान्त्वना दी कि इस बार वह ज़रूर विजय पायेगा।

जब दस बज गये तो रमेश इन्टरव्यू के लिए गया। शनिवार का दिन था, इसलिए कालेज नहीं था। मैं प्रेमचन्दजी का "गोदान" लेकर बैठ गया। उपन्यास इतना मज़ेदार था कि समय कैसे बीत गया, यह मुझे मालूम नही। एक बजते बजते रमेश लौटकर आया। उसका उतरा हुआ चेहरा देखकर मेरा मन सन्न रह गया। मुझे मालूम हुआ कि इन्टरव्यू में उसको सफलता नहीं मिली होगी, मैंने कुछ नही पूछा।

कमरे को ताला लगाकर हम दोनों भोजन के लिये होटल की ओर चले। रमेश चुप था। मैं भी चुप रहा। जब हम होटल से लौटे तो रास्ते में ही मैंने रमेश से बातचीत शुरू की।

"क्यों रमेश इन्टरव्यू कैसी रही?" मैंने पूछा।

"अरे, सब एक नम्बर के बदमाश हैं।" रमेश फूट पडा।

"क्यों, क्या बात है?" मैं फिर पूछ बैठा।

"कम्पनी के एक डायरक्टर का भतीजा यह नौकरी मिलने के लिये परिश्रम कर रहा है और इसमें किसी को भी सन्देह नहीं कि यह उसी को दिया जायगा।" रमेश ने कहा।

"तो फिर उन लोगों ने तुम्हें बुलाया क्यों?"

"लोगों की आँखों में धूल झोंकने के लिये, और किसके लिये?"

हम लोग फिर चुप हो गये। जब हम अपने मकान पहुँचे तो मैंने रमेश से कहा, "अच्छा, जी ये सब बातें भूल जाओ, जरा हम सिनेमा देखकर आवें।" मैं रमेश का दिल बदलाना चाहता था।

"नहीं मुझे अभी दो बजे की गाडी से घर जाना है।" वह तुरन्त बोल उठा।

"क्या? कोई विशेष कार्य है क्या?"

"विशेष कार्य तो नहीं, फिर भी यहाँ रहकर तुम्हें भी क्यों सताऊँ?" रमेश उदास होकर बोला।

"अरे भाई, कैसी बातें करते हो, मैं तो तुम्हें यहाँ दो दिन ठहरने के बाद ही जाने दूँगा।" मैं ने कहा।

लेकिन रमेश ने मेरी एक नमानी ने वह उसी समय जाने का हठ करने लगा। मैं ने उस से ठहरने के लिए अनुरोध किया लेकिन मेरी बात वह कैसे माने।

स्टेशन पर मैं भी उसके साथ चला। टिकट लेकर जब हम प्लेटफार्म पर आये तो देखा कि गाडी जाने के लिए तैयार है। मैं ने रमेश को सान्त्वना दी और कहा कि जीवन कठिनाइयों की एक पहली है और धीरज के साथ उसका सामना करने में ही विजय है। रमेश मौन था। मैं ने उससे कहा कि मैं उसकी सहायता करने के लिए तैयार हूँ और इसमें मुझे सन्तोष ही होगा। रमेश चुप था। उसका उतरा हुआ चेहरा और शोक भरी आँखें देखकर मुझे भी दुःख हुआ।

इतने में गाडी ने सीटी बजाई और गार्ड ने हरा झण्डा फहरा था। रमेश गाडी में जा बैठा। गाडी चलने लगी और मैं ने उससे "गुड बै" कहा। फिर मैं अपने मकान को लौटा। रमेश की याद रह रह कर मेरे मन में आने लगी।

दूसरे दिन जब मैं सोकर उठा, तो सूरज चढ़ आया था। घडी की ओर देखा तो नौ बज गये थे। हाथ मुँह धोकर जल्दी नाश्ता करने के लिए होटल की तरफ़ चला। लौटते समय एक समाचार पत्र भी लेते आया। आराम कुर्सी में लेटकर मैं समाचार पत्र पढने लगा। पढते पढते एक पन्ने के एक कोने में मैं ने यह समाचार भी पढा।

नई दिल्ली,
मार्च १०.

"आज दो पहर को करीब ढाई बजे यहाँ से पन्द्रह मील दूर ग्राण्ट ट्रंक एक्सप्रेस से अचानक गिर पड़ने के कारण रमेश नामक एक युवक का तुरन्त देहान्त हो गया। उसके पास दिल्ली से नागपुर जाने का रेल-टिकट था। जान पड़ता है कि वह दिल्ली में कहीं एक इन्टरव्यू के लिए आया था।"

मेरा कलेजा धक-धक करने लगा। मुझे ऐसा मालूम हुआ जैसे मेरे पैरों के नीचे से धरती फिसलती जा रही है। आँखों में अन्धेरा छा रहा है। मैं क्या पढ़ रहा हूँ? आँखें मलकर मैंने वह समाचार फिर पढ़ा। हाँ, ठीक है, यह मेरा दोस्त रमेश ही है। अचानक उसका यह वाक्य मुझे याद आया, "नरेश, जीना ही अब मेरे लिए मुश्किल हो गया है।" उस का उतरा हुआ चेहरा, शोक भरी आँखें और दुःख भरे शब्द, सब बातें मुझे याद आने लगीं। तो क्या, सचमुच वह अचानक गिर पड़ा था? समाचार पत्र में तो ऐसा लिखा था, लेकिन मेरा मन यह मानने को तैयार नहीं था। क्या यह आत्महत्या नहीं थी? क्या रमेश अपने प्राण का अन्त करना नहीं चाहता था? हाँ चाहता था। तो क्या यह आत्महत्या नहीं?

१ स्वतंत्र भारत के विद्यार्थियों की जिम्मेदारियाँ ॥

(एम. नागिराज, एम. ए., एल. एलबी—प्राद्यापक)

समय बदल गया है, परिस्थितियाँ बदल गयी हैं और इसलिए हमारी जिम्मेदारियाँ भी बढती जारही हैं। पराधीन भारत के विद्यार्थियों की जिम्मेदारियाँ सीमित थीं। उस समय लोग सिर्फ नौकरी के उद्देश्य से अपने बच्चों को पढाते थे। शिक्षा का संबध जीवन से भी है इस ओर बहुत ही कम लोगों का ध्यान था। और यह ठीक भी था क्यों की उस समय के शासक अंग्रेज थे। उन्हें भारत में अपना शासन चलाने केलिये कुछ पढे लिखे सेवकों की ज़रूरत थी, सो उन्होंने हमारी शिक्षा प्रणाली भी उसी तरह की रखी थी कि पढे लिखे लोग सिर्फ नौकरी कर सके और कुछ भी न कर सके।

परंतु आज का विद्यार्थी स्वाधीन भारत का विद्यार्थी है। आगे जाकर उसे ही देश की बागडोर संभालनी पडेगी, देश-गौरव की रक्षा करनी होगी। इसलिए उसे अपनी जिम्मेदारियों को अच्छी तरह समझलेना चाहिए। आज शिक्षा का उद्देय पढ लिख कर केवल नौकरी प्राप्त करना नहीं है, बलकी जीवन को सब तरह से उपयोगी बनाना है। कोई भी सरकार सभी पढे लिखे लोगों केलिए नौकरी नहीं दे सकती। पढलिख कर हम सच्चे नागरिक बनें, अपनी जाति, अपने देश के रक्षक बनें, इसीतरह राष्ट्रीय एवं अंतराष्ट्रीय दृष्टि से भी हम सर्व हितैषी बन यह सब हम सच्ची शिक्षा के द्वारा ही प्राप्त कर सकते हैं। शिक्षा का क्षेत्र बडा व्यापक है, वह विद्यालयों कक्षाओं और ग्रन्थालयों तक ही सीमित नहीं है। विद्यार्थियों को इस तथ्य को समझ लेना चाहिए।

हम सब जानते हैं कि अंधा ठीक रास्ता नहीं बता सकता उसी तरह अयोग्य योग्यता का पाठ नहीं पढा सकता अज्ञानी ज्ञान का उपदेश नहीं दे सकता। जो आज विद्यार्थी हैं वे ही आगे जाकर देश के नेता बनेंगे। असमर्थ हाथों में देश कभी सुरक्षित नहीं रह सकता नींव के दुर्बल होने पर मकान नहीं ठहर सकता। अतः विद्यार्थि दशा में मनुष्य को अपने आप को सर्व समर्थ सर्वयोग्य बनालेने का प्रयत्न करना चाहिए इस अवस्था में मनुष्य जैसा बनना चाहेगा वैसा बन जायेगा। अपने मास्तिष्क और हृदय को हमशा खुला रखना चाहिए। यह समझ लेना चाहिए कि ज्ञान का भाण्डार कभी पूर्ण नहीं होता।

परंतु बिना परिश्रम किये ही ज्ञान की प्राप्ति की आशा करना अनुचित है। कहते हैं तपस्या किये बिना स्वर्ग नहीं मिलता कष्ट सहे बिना सुख का आनन्द नहीं मालूम होता। परिश्रम के बिना उत्तम फल प्राप्त करने की कल्पना नैतिक रूप से भी अन्याय है। कर्म वीरलोग फल-भोग की आशा कभी नहीं करते। वे साहस से आगे बढते हैं और उद्योग करते हैं फल तो प्रायः आशा से भी अधिक आशा दायी होते हैं अनेक वैज्ञानिक अन्वेषण परिश्रम के ही फल हैं। उद्योगी-परिश्रमी केलिए कुछ भी असाद्य नहीं। परिश्रम के महत्व को हमारे विद्यार्थियों को समझ लेना चाहिए।

अनुशासन के बिना कोई काम ठीक तरह से नहीं हो सकता। किसी काम को अच्छी तरह से करने केलिये कुछ नियम, कुछ काम और कुछ ढंग होने चाहिएँ। उसी तरह हमारे व्यवहार में भी अनुशासन की जरूरत है। किस मौके पर किस से किस तरह बोलना चाहिए किसतरह उठना-बैठना चाहिए आदि ऐसी बातें हैं जो मनुष्य की योग्यता और अयोग्यता के दर्पण हैं। अतः अनुशासित जीवन बनाना मनुष्य केलिये आवश्यक है। अनुशासन के बिना एकता कायम नहीं हो सकती एकता के बिना हम अपनी समस्याएँ हल नहीं कर सकते। हमारे पूज्य नेता गण हमारे देश की अभिवृद्धि के लिये हमारी समस्याएँ सुलझाने के लिये सतत प्रयत्न कर रहे हैं परंतु एक दिन हमें ही अपने देश के लिये काम करने होंगे। इस लिये हमारे नेताओंने हमारे सामने जो उन्नत एवं आदर्श मार्ग बना रखा है उस पर चलने के लिए और देश को उत-रोत्तर उन्नति के शिखर पर पहुँचाने के लिए अनुशासन की परम आवश्यकता है। इस लिये विद्यार्थियों को अनुशासन के महत्व को भी स्वीकार कर लेना चाहिये।

मनुष्य पर सब से अधिक प्रभाव डालनेवाली वस्तु है उसका सच्चरित्र। चरित्रहीन चरित्र का पाठ पढावे तो उसे कोई नहीं मानेगा। असत्य बोलनेवाला सत्य बोलने का उपदेश दे, चोर चोरी की बुराई बतावे तो कोई विश्वास नहीं करेगा। जो स्थान फूल में सुगन्ध का है वही स्तान मनुष्यों में चरित्र का है बहुत से महापुरुष विद्या से नहीं बलकि सच्चरित्र से महान पूज्य एवं जनं प्रिय हुए हैं। सच्चरित्र महापुरुषों पर जनता अपना सब कुछ समर्पित कर देती है पढेलिखे सच्चरित्र बन जाय तो सोने में सुगन्ध के समान शोभा देंगे। मनुष्य में सब कुछ हो लेकिन सच्चरित्र नहीं तो समझना चाहिए कि कुछ भी नहीं है। यदि सच्चरित्र है बाकी कुछ भी नहीं है तब भी वह पूज्य है। विद्यार्थियों को समझ लेना चाहिये कि सच्चरित्रता शिक्षा का अभिन्न अंग है। सब को समान समझना, पर निंदा न करना परदुःख दूर करने में तत्पर रहना किसी को किसी प्रकार का कष्ठ न देना सबकी भलाई चाहना, कष्ट से नहीं घबराना आदि ऐसे गुण है जो उन्नत होकर मनुष्य में ईश्वरत्व के दर्शन करा देते हैं।

आज हम देख रहे हैं कि मानव महाविनाश के बहुत निकट पहुँच गया है। वैज्ञानिक शक्ति परीक्षा में जगत किसी भी क्षण समाप्त हो सकता है। भारत की यह परंपरा रही है कि ऐसे समय संसार को सच्चा रास्ता बतावे। भारत सदा शाँती का पूजारी रहा विनाशक नहीं। वह छोटे-बडे सभी राष्ट्रों के आस्तित्व को मानता हैं और सब राष्ट्रों के साथ मैत्री बनाए रखना चाहता है। दुनिया के सब राष्ट्रों में भ्रातृ-भाव बढाने से ही दुनिया में शाँति बनी रह सकती है अन्यथा कोई भी राष्ट्र बचा नहीं रहेगा वह संदेश भारत दुनिया के कोने कोने में पहुँचा नचाहता है। भारत की इस सर्व हितदायक नीति की सफलता में उसके विद्यार्थियों का सहयोग परम आवश्यक है। आज भारत संसार के उन्नत राष्ट्रों में अपना एक विशिष्ठ स्थान रखता है। भारत ने इन दश वर्षों में जो आशातीत उन्नति की है, उसे अन्य राष्ट्र बडे कुतूहल से देख रहे हैं।

यह सब हमारे सौभाग्य की बात है। इसी कारण विद्यार्थियों की जिम्मेदारियाँ बहुत बढ गयी हैं। देश की इस बढे हुए गौरव को बचाकर उसे उत्तरोत्तर उन्नत बनाने केलिए विद्यार्थियों को शिक्षा के महत्व को समझकर मानासिक रूप से नैतिक रूप से और शारीरिक रूप से सब तरह से अपने आप को सबे समर्थ सर्वयोग्य बनाने का प्रयत्न करना चाहिये॥